मुगल शैली (1560-1800 ईसवी सन्)

चित्रकला की मुगलशैली की शुरुआत को भारत में चित्रकला के इतिहास की एक युगान्तरकारी घटना समझा जाता है । मुगल साम्राज्य की स्थापना हो जाने के पश्चात् चित्रकला की मुगल शैली की शुरुआत सम्राट अकबर के शासनकाल में 1560 ईसवी सन् में हुआ था । सम्राट अकबर को चित्रकला और वास्तुकला में अत्यधिक रुचि थी । जब वे एक बालक थे तब उन्होंने चित्रकला में शिक्षा ली थी । उनके शासन के प्रारम्भ में दो फारसी अध्यापकों मीर सयद अली और अब्दुतल समद खान की देखरेख में एक शिल्पशाला की स्थापना की गई थी, जिन्हें मूल रूप से सम्राट अकबर के पिता हुमायूं ने नौकरी दी थी । समूचे भारत में बड़ी संख्या में भारतीय कलाकारों को फारसी उस्तादों के अधीन काम पर रखा गया था ।

अकबर की वापसी आईने-अकबरी से
मुगलकालीन चित्रकला

मुगल शैली का विकास चित्रकला की स्वदेशी भारतीय शैली और फारसी चित्रकला की सफाविद शैली के एक उचित संश्लेषण के परिणामस्वरूप हुआ था । प्रकृति के घनिष्ठ अवलोकन और उत्तम तथा कोमल आरेखण पर आधारित सुनम्य प्रकृतिवाद, मुगल शैली की एक विशेषता है । यह सौन्दर्य के उच्च गुणों से परिपूर्ण है तथा प्राथमिक रूप से वैभवशाली और निरपेक्ष है ।

क्लीवलैण्ड कला संग्रहालय (यू एस ए) में तूती-नामा की एक सचित्र पाण्डुलिपि मुगल शैली की प्रथम कलाकृति प्रतीत होती है । इस चित्रकला की शैली में मुगल शैली अपने विकास-काल में दिखाई देती है । इसके शीघ्र पश्चात 1564-69 ईसवी सन् के बीच हमज़ानामा के रूप में एक अति महत्वाकांक्षी परियोजना पूरी की गई थी जिसमें कपड़े पर सत्रह खण्डों में मूल रूप से 1400 पृष्ठ शामिल हैं, प्रत्येक पृष्ठ का आकार लगभग 27”X20” है । हमज़ानामा की शैली तूती-नामा की अपेक्षा अधिक विकसित और परिष्कृत है ।

कपड़े पर हमज़ा-नामा रेखाचित्र
मुगलकालीन चित्रकला

हमज़ानामा के सचित्र उदाहरण स्विटजरलैण्ड के एक निजी संग्रह में हैं । ये एक मण्डप की ऊपरी मंजिल से एक बहुतलीय मीनार पर एक पक्षी के मिह्रदुखत आखेट बाणों के साथ दिखाते हैं । इस लघु चित्रकला में हम यह देख सकते हैं कि वास्तुकला भारतीय फारसी है, वृक्षों की किस्मों को प्रमुख रूप से दक्कनी चित्रकला से लिया गया है और महिला आकृतियों का अनुकूलन राजस्थान की प्राचीन चित्रकला से किया गया है । महिलाओं ने चार कानों वाले नोकदार लहंगे तथा पारदर्शी मुस्लिम बुर्के पहने हुए हैं । पुरुषों ने जो पगड़ियां पहनी हुई हैं, वे छोटी तथा कसी हुई हैं और अकबर युग की प्रारूपी हैं । आगे चल कर मुगल शैली मुगल राजदरबारों में आने वाली यूरोपियाई चित्रकला से प्रभावित हुई और इसमें छायाकरण और परिप्रेक्ष्य जैसी पश्चिमी तकनीकों में से कुछ को आत्मसात किया गया ।

अकबर के युग के दौरान चित्रित अन्य महत्त्वपूर्ण पाण्डुलिपियां हैं- ब्रिटिश संग्रहालय, लन्दन में 1567 की सादी गुलिस्तां, स्कूल ऑफ ओरिएंटल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, लन्दन विश्वविद्यालय में 1570 की अनवरी-सुहावली (किस्से कहानी की एक पुस्तक) रॉयल एशियाटिक सोसायटी लाइब्रेरी में सादी की एक अन्य गुलिस्तां दीवान जिसकी 1581 में मोहम्मद हुसैन अल-कश्मीरी ने फतेहपुर सीकरी में एक प्रति तैयार की, हाफिज के बिब्लिओथिक नेशनल में कवि आमिर शाही का एक दीवान, जिनमें से एक ब्रिटिश संग्रहालय तथा चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय डबलिन में हैं और दूसरी चेस्टिर बिट्टी पुस्तकालय के फारसी अनुभाग में है । तूती-नामा की अन्य पाण्डुलिपि इसी पुस्तकालय में हैं । जयपुर महाराजा संग्रहालय, जयपुर के रज़मनामा (महाभारत का फारसी अनुवाद) बुटेलियन पुस्तकालय में 1595 की जामी की बहरिसतां, ब्रिटिश संग्रहालय में दराब-नामा, विक्टोरिया और एल्बर्ट संग्रहालय, लन्दन में अकबर-नामा (लगभग 1600 ईसवी), तेहरान में गुलिस्तां पुस्तकालय में 1596 ईसवी सन् की तारीख-ए-अल्फी, अनेक बाबर-नामा, सोलहवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में निष्पादित एक पाण्डुलिपि, खुदाबक्श-पुस्तकालय, पटना में तवारीख-ए-खानदान तैमूरिया, चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय, डबलिन में 1602 की योग वाशिष्ठ, आदि । इसके अतिरिक्त अकबर के युग में राजमहल, आखेट के दृश्यों और प्रतिकृतियों की अनेक चित्रकलाएं भी निष्पादित की गई थीं ।

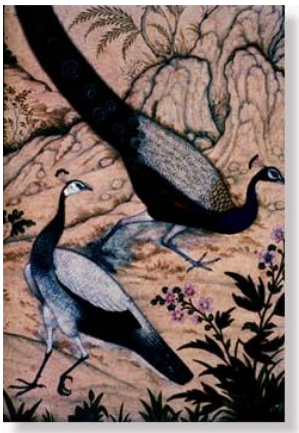

मोर मुगलशैली की चित्रकला

अकबर के राजदरबार के चित्रकारों की एक सूची में बड़ी संख्या में नाम शामिल हैं । पहले जिन दो फारसी चित्रकारों का उल्लेख किया गया है उन्हें छोड़कर प्रसिद्ध चित्रकारों में से कुछ हैं - दसवंत मिसकिना, नन्हा , कन्हा , बासवान, मनोहर, दौलत, मंसूर, केसू, भीम गुजराती, धर्मदास, मधु, सूरदास, लाल, शंकर गोवर्धन और इनायत ।

जहांगीर का चित्र भित्तिचित्र मुगलशैली की चित्रकला

जहांगीर के अधीन चित्रकला ने अधिकाधिक आकर्षण, परिष्कार और गरिमा प्राप्त की । उन्हें प्रकृति के प्रति अधिक आकर्षण था और उन्हें पक्षियों, पशुओं तथा पुष्पों को चित्रित करने में प्रसन्नता होती थी । इनके युग में सचित्र उदाहरण देकर स्पष्ट की गई कुछ महत्त्वपूर्ण पाण्डुलिपियां हैं- अयार-ए-दानिश नामक पशुओं के किस्से-कहानियों की एक पुस्तक, जिसके पन्नों का संग्रह कोवासजी जहांगीर संग्रह, मुम्बई और चेस्टनर बिट्टी पुस्तकालय, डबलिन में हैं, और अनवर-ऐ-सुनावली, ब्रिटिश संग्रहालय, लन्दन में किस्से-कहानी की एक अन्य पुस्तक है । इन दोनों को 1603-10 के बीच निष्पादित किया गया था, गुलिस्तां में कुछ लघु चित्रकलाएं और हफीज़ का एक दीवान, ये दोनों ब्रिटिश संग्रहालय में हैं । इसके अतिरिक्त, इस काल के दौरान दरबार के दृश्यों, प्रतिकृतियों, पक्षियों, पशुओं और पुष्पों का अध्ययन भी किया गया था । जहांगीर के प्रसिद्ध चित्रकार अका रिज़ा, अबुल हसन, मंसूर, बिशन दास, मनोहर, गोवर्धन, बालचन्द, दौलत, मुखलिस, भीम और इनायत हैं ।

जहांगीर की प्रतिकृति जहांगीर के युग के दौरान निष्पादित लघु चित्रकलाओं का एक प्रतीकात्मक उदाहरण है । यह लघु चित्रकला राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में है । इसमें जहांगीर को अपने दाहिने हाथ में विर्जिन मेरी के एक चित्र को पकड़े हुए दिखाया गया है । यह प्रतिकृति अपने उत्कृष्ट आरेखण और परिष्कृत प्रतिरूपण तथा वास्तविकता के लिए असाधारण है । फूलों के डिजाइनों से सजे हुए किनारों पर सुनहरे रंग का उदारतापूर्वक प्रयोग किया गया है । किनारों पर फारसी शैली दिखाई देती है । यह प्रतिकृति 1615-20 ईसवी सन् की है । मुगल सम्राट के उदाहरण का पालन करते हुए, दरबारियों और प्रान्तीय अधिकारियों ने भी चित्रकला को संरक्षण प्रदान किया । उन्होंने चित्रकला की मुगल तकनीकों से प्रशिक्षित कलाकारों को कार्य सौंपा लेकिन उन्हें उपलब्ध कलाकार

निम्न कोटि के थे जो राजसी कलागृह में रोजगार पाने में सक्षम नहीं थे । इन्हें केवल उच्च कोटि के कलाकारों की आवश्यकता थी । इन कलाकारों की कला-कृतियों को 'लोकप्रिय मुगल' या 'प्रान्तीय मुगल' चित्रकला की संज्ञा दी गई है । चित्रकला की इस शैली में राजसी मुगल चित्रकला की सभी विशेषताएं तो हैं लेकिन ये हैं निम्न कोटि की हैं । लोकप्रिय मुगल चित्रकला के कुछ उदाहरण हैं- 1616 ईसवी सन् की रज़म-नामा की एक शृंखला, रसिकप्रिया की एक शृंखला (1610-1615) और लगभग 1610 ईसवी सन् की रामायण की एक शृंखला जो कि अनेक भारतीय और विदेशी संग्रहालयों में उपलब्ध हैं ।

सत्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में रामायण की एक शृंखला की प्रतीकात्मक लोकप्रिय मुगल शैली में एक उदाहरण राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में है । इसमें लंका में राम और रावण के सैनिकों के बीच लड़ाई को दिखाया गया है । राम अपने भाई लक्ष्मण के साथ अग्रभाग में बाईं ओर दिखाई दे रहे हैं जबकि रावण अपने राजमहल में दानव प्रमुखों के साथ सुनहरे किले में विचार-विमर्श करते हुए दिखाई दे रहा है । आरेखण अच्छा है लेकिन उतना परिष्कृत नहीं है जैसा राजसी मुगल चित्रकला में देखने को मिलता है । मानव मुखाकृति, दानव, वृक्ष और शैलों की अभिक्रिया सभी मुगल अन्दाज के हैं । इस लघु चित्रकला की विशेषता युद्ध के दृश्यों में सृजित कार्रवाई की भावना और नाटकीय संचलन है, शाहजहां के अधीन मुगल चित्रकला ने अपने अच्छे स्तर को बनाए रखा तथापि उनके राज्य की अन्तिम अवधि के दौरान शैली परिपक्व हो गई थी । उनके चित्रकारों ने चित्रकला पर पर्याप्त ध्यान दिया था । उनके समय के जाने-माने कलाकार विचित्र, चैतरमन, अनूप चत्तर, समरकन्द का मोहम्म्द नादिर, इनायत और मकर हैं । चित्रकला के अतिरिक्त, तपस्वियों और रहस्यवादियों के समूहों को दर्शाने वाली अन्य चित्रकलाएं और अनेक निदर्शी पाण्डुलिपियां भी इस अवधि के दौरान निष्पादित की गई थीं । इन पाण्डुलिपियों मे ध्यान देने योग्य कुछ उदाहरण हैं : गुलिस्तां तथा सादी का बुस्तान, सम्राट के लिए उनके शासनकाल के प्रथम और द्वितीय वर्ष में प्रति तैयार की और विंडसर दुर्ग में शाहजहां नामा (1657) ।

विश्व मानचित्र पर शांहजहाँ मुगलशैली की चित्रकला

राष्ट्रीय संग्रहालय के संग्रह में एक लघु चित्रकला सूफियों की एक सभा को चित्रित करती हैं । सूफी खुले स्थान पर बैठे हुए हैं और चर्चा में व्यस्त हैं, यह शाहजहां काल की मुगल शैली के ग्रहणशील प्रकृतवाद को प्रदर्शित करती है । आरेखण परिष्कृत है और वर्ण फीके हैं, पृष्ठभूमि हरी है तथा आकाश सुनहरे रंग का है । किनारे सुनहरे रंग में पुष्पीय अभिकल्पों को दर्शाते हैं । यह लघु कला-कृति लगभग 1650 ईसवी की है ।

औरंगजेब अति धर्मनिष्ठ था, इसलिए कला को प्रोत्साहित नहीं करता था । इस अवधि के दौरान चित्रकला के स्तर में गिरावट आई और इसकी पूर्ववर्ती गुणवत्ता कहीं विलुप्त हो गई । राजदरबार के असंख्य चित्रकार प्रान्तीय राजदरबारों में चले गए ।

बहादुरशाह के शासनकाल में, औरंगजेब द्वारा अवहेलना के पश्चात् मुगल चित्रकला का पुनरुद्धार हुआ, जो शैलीगत सुधार को दर्शाती है ।

1712 ईसवी सन् के पश्चात् मुगल बादशाहों के अधीन मुगल चित्रकला में पुन: कमी आने लगी थी । हालांकि इसका बाह्य रूप वैसा का वैसा रखा गया, फिर भी यह निर्जीव होती चली गई और पूर्ववर्ती मुगलकला की अन्तर्निहित गुणवत्ता को खो दिया ।

Ajanta Painitngs

र्वाधिक कोमल रूपों में से एक है जो रेखा और वर्ण के माध्यम से विचारों तथा भावों को अभिव्यक्ति देती है । इतिहास का
ूर्व कई हजार वर्षों तक जब मनुष्य मात्र गुफा में रहा करता था, उसने अपनी सौन्दर्यपरक अतिसंवेदनशीलता और
णा को संतुष्ट करने के लिए शैलाश्रय चित्र बनाए ।

और अभिकल्प के प्रति लगाव इतना गहरा है कि प्राचीनकाल में भी इन्होंने इतिहास के समय के दौरान चित्रकलाओं तथा
जन किया जिसका हमारे पास कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं हैं ।

ना के साक्ष्य मध्य भारत की कैमूर शृंखला, विंध्य पहाडियों और उत्तर प्रदेश के कुछ स्थानों की कुछ गुफाओं की दीवारों पर

न्य जीवों, युद्ध के जुलूसों और शिकार के दृश्यों का आदिम अभिलेख हैं । इन्हें अपरिष्कृत लेकिन यथार्थवादी ढंग से तैयार
ये सभी आरेखण स्पेन की उन प्रसिद्ध शैलाश्रय की चित्रकलाओं से असाधारण रूप से मेल खाती हैं जिनके संबंध में यह
क वे नवप्रस्तर मानव की कला कृतियां हैं ।

फा 1, अजंता गुफा , महाराष्ट्र

हड़प्पन संस्कृति की सामग्री की सम्पदा को छोड़ दें तो भारतीय कला कई वर्षों के लिए समग्र रूप से हमारी दृष्टि से ओझल हो जाती है । भार
खाई को अभी तक संतोषजनक रूप से भरा नहीं जा सका है । तथापि इस अंधकारमय युग के बारे में ईसा के जन्म से पूर्व और बाद की
संबंधित हमारे पुराने सहित्य में से कुछ का हवाला दे कर कुछ थोड़ा-बहुत सीख सकते हैं । लगभग तीसरी-चौथी शताब्दी ईसा पूर्व का ए
विनयपिटक विहार गृहों के कई स्थानों का हवाला देता है जहां चित्रकक्ष हैं जिन्हें रंग की गई आकृतियों और सजावटी प्रतिरूपों से सजा
महाभारत और रामायण कालीन प्रसंगों का भी वर्णन मिलता है, मूल रूप में इनकी संरचना अति पुराकाल की मानी जाती है । इस प्रार
चित्रकलाओं को महाराष्ट्र राज्य के औरंगाबाद के निकट स्थित अजन्ता के चित्रित किए गए गुफा मन्दिरों की ही भांति, बौद्ध कला की उत्तरवर्ती
उत्कीर्ण और रंग की गई चित्रशालाओं का आदिपुरुष माना जा सकता है । चट्टान को छेनी से काट कर अर्धवृत्ता कार शैली में बनाई गई गुफा
30 है । इनके निष्पादन में लगभग आठ शताब्दियों का समय लगा था । प्रारम्भिक शताब्दी संभवत: दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व और अन्तिम श
शताब्दी ईसवी सन् के आस-पास है ।

इन चित्रकलाओं की विषय-वस्तु छत और स्तम्भों के सजावटी प्रतिरूपों को छोड़कर, लगभग बुद्धवादी है । ये भगवान बुद्ध के पूर्ववर्ती जन्मों को अभिलेखबद्ध करने वाली कहानियों के संग्रह 'जातक' से अधिकांश सहयोजित हैं । इन चित्रकलाओं की संरचनाएं विस्तार में बड़ी हैं, लेकिन अधिकांश आकृतियां आदमकद से छोटी हैं । अधिकांश अभिकल्पोंल में मुख्य पात्र वीरोचित आयाम में हैं ।

चित्रकारी: गुफा 2, छत पर डिजाइन , अजंता गुफा, महाराष्ट्र

संरचना की मुख्य विशेषताओं में एक केन्द्रीयता है ताकि प्रत्येक दृश्य में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति पर ध्यान तत्काल चला जाए । अजन्ता की आकृतियों की रूपरेखाएं श्रेष्ठ हैं और सौन्दर्य तथा रूप के एक तीक्ष्ण अवबोधन को उद्घाटित करती हैं । शरीररचना के सटीकपन के लिए कोई अनुचित प्रयास नहीं किया गया है क्योंकि आरेखण स्वाभाविक है । रंगसाजों ने बुद्ध की सच्ची महिमा को समझ लिया था और बुद्ध के जीवन से जुड़ी कहानी को उन्होंने यहां मानव जीवन के शाश्वत प्रतिरूप को स्पष्ट करने के मूलभाव के रूप में प्रयोग किया था । यहां जिन कहानियों को

सचित्र दर्शाया गया है वे सतत और विस्तृत हैं तथा ये राजाओं के महलों और जनसाधारण के गांव-खेड़ों में मंचित प्राचीन भारत के नाटक को प्रस्तुत करते हैं । राजा और जनसाधारण जीवन के सौन्दर्यपूर्ण और आत्मिक मूल्यों की तलाश में समान रूप से लिप्त हैं ।

अजन्ता की गुफा सं. नौ और दस में प्राचीनतम चित्रकलाएं है जिनमें से एकमात्र बची चित्रकला गुफा दस की बाईं दीवार पर एक समूह है । इसमें एक राजा को अपने परिचरों के साथ पताकाओं से अलंकृत एक वृक्ष के समक्ष चित्रित किया गया है । राजा पवित्र बोधिवृक्ष तक राजकुमार से जुड़ी किसी मन्नत को पूरा करने के लिए आया है । राजकुमार राजा के निकट ही खड़ा है । यह खण्डित चित्रकला संरचना और निष्पादन दोनों ही क्षेत्रों की एक सुविकसित कला को दर्शाती है जिसे परिपक्वता के इस चरण तक पहुँचने में कई शताब्दियां अवश्य लग गई होंगी । इस चित्रकला और अमरावती की मूर्तिकला और लगभग दूसरी शताब्दी ईसवी पूर्व के प्रारम्भिक सातवाहन शासन के कालों के बीच मानव आकृतियों की वेशभूषा, आभूषणों तथा जातीय विशेषताओं के बारे में इनके निरूपण में घनिष्ठ समानता है ।

लगभग पहली शताब्दी ईसवी सन् से संबंधित इसी गुफा (गुफा सं. दस) की दाहिनी दीवार के साथ-साथ शददान्ता जातक भी अत्यधिक दीर्घ तथा सतत संरचना अजन्ता की एक अन्य बची चित्रकला है । यह चित्रकला सबसे सुन्दर चित्रकलाओं में से एक है लेकिन दुर्भाग्यवश सबसे अधिक क्षतिग्रस्त चित्रकलाओं में से भी एक है और इसकी सराहना मात्र स्थल पर जा कर ही की जा सकती है ।

हमारे पास आगामी दो या तीन शताब्दियों की चित्रकलाओं का नगण्य प्रमाण है, लेकिन यह निश्चित है कि चित्रकलाएं अच्छी मात्रा में कभी न कभी विद्यमान रही होंगी । अजन्ता की चित्रकलाओं की आगामी शेष बची और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शृंखलाएं पांचवीं और सातवीं शताब्दी ईसवी के बीच निष्पादित गुफा सं. 16,17,2, और 1 में हैं ।

इस अवधि का एक सुन्दर उदाहरण वह चित्रकला है जो आम तौर पर 'मरणासन्न राजकुमारी' कहलाने वाली के दृश्य को गुफा सं. 16 में सचित्र प्रस्तुत करती है जिसे पांचवीं शताब्दी ईसवी सन् के प्रारम्भिक भाग में तैयार किया गया था । कहानी यह बताती है कि कैसे भगवान बुद्ध नन्द को, इस कन्या से छुड़ा कर स्वर्ग में ले जाते हैं, जो उससे भावपूर्ण रूप से प्यार करती है । अप्सराओं के सौन्दर्य से अभिभूत होकर, नन्द अपने सांसारिक प्यार को भूल गया था और स्वर्ग के एक लघु मार्ग के रूप में बौद्ध धर्मसंघ को अपना लिया था । समय के साथ उसने अपने वास्तविक लक्ष्य के मिथ्याभिमान को देख लिया और उसने बौद्ध धर्म को अपना लिया था लेकिन उसकी प्रिय राजकुमारी को निर्दयतापूर्वक उसके भाग्य पर बिना किसी सांत्वना के छोड़ दिया गया था । यह अजन्ता की सर्वाधिक असाधारण चित्रकलाओं में से एक है क्योंकि रेखा का संचलन अचूक और निश्चल है । रेखा का वह अनुकूलन सभी प्राच्य चित्रकलाओं की मुख्य विशेषता है और अजन्ता के कलाकारों की महानतम उपलब्धियों में से एक है । यहां मनोभाव और करुणा को शरीर के नियंत्रित घुमाव तथा संतुलन तथा भुजाओं की भावपूर्ण भांगिमाओं द्वारा व्यक्त किया गया है ।

छठीं शताब्दी ईसवी सन् की गुफा सं. दस में उड़ती हुई अप्सराएं है । इस युग की विशेषता समृद्ध अलंकरण को उनकी मोतियों और फूलों से सजी पगड़ी में सुन्दरता से चित्रित किया गया है । कंठी का पीछे की ओर जाना दक्षतापूर्वक चित्रित अप्सरा की उड़ान का आभास देता है ।

अजन्ता की बाद की चित्रकलाएं जो कुछ भी अब शेष हैं कुल मिला कर उसका एक बड़ा हिस्सा हैं तथा इनका सृजन छठीं और सातवीं शताब्दी ईसवी सन् के मध्य में किया गया था तथा ये गुफा सं. दो एवं एक में हैं । ये विस्तार और आभूषणीय अभिकल्पों के साथ जातक की कहानियों को चित्रित करती हैं । गुफा सं. एक में महाजनक जातक के दृश्य इस युग की अजन्ता चित्रकलाओं के

सर्वोत्तम बचे हुए उदाहरण हैं ।

एक दृश्य में राजकुमार महाजनक, भावी बुद्ध, अपनी माता से साम्राज्य की समस्याओं के बारे में चर्चा कर रहे हैं, महारानी को अत्यधिक मनोहारी मुद्रा में दर्शाया गया है तथा वे अपनी दासियों से घिरी हुई हैं । इनमें से कुछ चंवर के साथ राजा के पीछे खड़ी हुई दिखाई दे रही हैं । एक अन्य प्रवचन में, राजकुमार अपने उस साम्राज्य पर पुन: विजय पाने के उद्देश्य से प्रस्थान करने से पूर्व सम्भवत: अपनी माता से सलाह ले रहा है जिसे उसके चाचा ने हड़प लिया है ।

राजकुमार का एक विस्तृत दृश्य उसके दाहिने हाथ की मनोहारी मुद्रा को दर्शाता है । कहानी का अगला दृश्य राजकुमारी की एक घोड़े की पीठ पर, उसके समस्त परिजनों सहित यात्रा को दर्शाता है । उसके अति उत्साही घोड़े द्वारा दृढ़ संकल्प को सुन्दरता से व्यक्त किया गया है, जबकि राजकुमार को सुकुमारता के एक सच्चे मूर्त रूप में दिखाया गया है, मानो करुणा से द्रवित हो रहा हो । इन तीन दासियों का संबंध राजसी भवन से है । इनमें से एक ने सफेद वस्त्र पहने हुए हैं जिन पर बत्खों की एक सुन्दर अलंकारी आकृति बनी हुई है ।

राजकुमार को अपने चाचा की राजधानी पहुंच कर यह पता चलता है कि उसके चाचा की अभी मृत्यु हो गई है और उसने उस व्यक्ति को अपना उत्तराधिकारी नामित किया है जो उसकी पुत्री सिवाली का हाथ जीत सकेगा । सिवाली को राजकुमार से प्यार हो जाता है और शगुनानुसार राजकुमार द्वारा राजसिंहासन को ग्रहण करना नियत करते हैं । अत: उसे राजसिंहासन पर बैठा दिया जाता है और इसके पश्चामत खूब आनंद मनाया जाता है ।

राज्यभिषेक समारोह का एक दृश्य है जिसमें राजकुमार को अपने सिर के ऊपर दो जल-पात्रों की सहायता से स्नान करते हुए दिखाया गया है । दृश्य के बाईं ओर एक दासी प्रसाधन किश्ती पकड़े हुए छतरी की ओर बढ़ रही है । यह राजसी अन्त:पुर को दर्शाता है जिसमें राजा महाजनक वैभवपूर्ण शैली में बैठे हुए हैं और रानी सिवाली पूरी मनोहरता से अपने प्रीतम की ओर देख कर मुस्करा रही हैं । ये नृत्य और संगीत का आनंद ले रहे हैं ।

आगामी दृश्य में वस्त्र धारण की हुई एक नर्तकी है जिसने सुन्दर मुकुट धारण किया हुआ है, उसके केश पुष्पों से सजे हुए हैं और वह वृन्दवाद्य की संगत पर नृत्य कर रही है । बाईं ओर दो महिलाएं बांसुरी बजा रही हैं और दाहिनी ओर कई महिला संगीतकार ढोल और मजीरा सहित विभिन्न वाद्य यंत्रों के साथ उपस्थित हैं । नर्तकी और संगीतकारों को रानी शिवाली ने आमंत्रित किया है ताकि राजा को रिझाया जा सके तथा उसका मनोरंजन किया जा सके एवं उसे विश्व का परित्याग करने के लिए हतोत्साहित किया जा सके । तथापि राजा महल की छत पर अतिसंयमी जीवन व्यतीत करने का निर्णय लेता है और वह एक एकान्तवासी से प्रवचन सुनने चला जाता है जिससे उसके संकल्प को शक्ति मिल सकेगी । एक हाथी की पीठ पर उसकी यात्रा एक ऐसे राजसी जुलूस का निरूपण है जो शाही मुख्य द्वार से होकर गुजर रहा है । कहानी के अन्तिम दृश्य में एक आश्रम के एक आंगन को चित्रित किया गया है जिसमें राजा एकान्तवासी के प्रवचन को सुन रहा है ।

चित्रकारी गुफा 1, बोधिसत्व , अजंता गुफा, महाराष्ट्र

गुफा एक की बोधिसत्व पद्मपाणि की चित्रकला अजन्ता चित्रकला की श्रेष्ठ कला-कृतियों में से एक है जिसे छठी शताब्दी ईसवी सन् के अन्त में निष्पादित किया गया था । उसने राजसी शैली में एक नीलम जडित मुकुट पहना हुआ है, उसके लम्बे काले बाल मनोहारी रूप से झुक रहे हैं । रमणीय रीति से अलंकृत यह आकृति आदमकद से भी बड़ी है और इसमें उसके दाहिने हाथ कुछ-कुछ रुके हुए तथा कमल के एक पुष्प को पकड़े हुए दर्शाया गया है । एक समकालीन कला आलोचक के शब्दों में अपने दुख की अभिव्यक्ति कर रही है अपनी गहरी करुणा की अनुभूति में है । यह कला-कृति इसमें अपनी विशिष्टता दर्शाती है और इसका अध्ययन करने पर हम यह समझ पाएंगे कि

आनन्दमय जीवन को सैदव के लिए त्याग देने की कड़वाहट भविष्य की प्रसन्नता के प्रति चाहत, आशा की एक भावना से मेल खाती है । कंधों और भुजाओं का सुदृढ़ प्रत्यक्ष आरेखण कुशलतापूर्वक अपने साधारण रूप में है । भौहें, जिन पर चहरे की अभिव्य क्ति काफी कुछ निर्भर करती है, साधारण रेखाओं द्वारा खींची गई हैं । कमल के पुष्प, को पकड़ने और हाथों की मुद्राओं को यहां जिस रूप में दिखाया गया है, अजन्ता के कलाकारों की महानतम उपलब्धि है ।

ज्ञानोदय के पश्चात बुद्ध के जीवन की स्मरणीय घटनाओं में से एक अनुकृति को अजन्ता चित्रकलाओं की सर्वश्रेष्ठता के रूप में गुफा सं. 17 में निरूपित किया गया है इसे लगभग छठीं शताब्दी ईसवी सन् में चित्रित किया गया था । यह कपिलवस्तु शहर में यशोधरा के आवास के द्वार तक बुद्ध की यात्रा का निरूपण करती है जबकि वे स्वयं अपने पुत्र राहुल के साथ महान राजा से मिलने के लिए स्वयं बाहर आई हुई है । कलाकार ने बुद्ध की आकृति को बृहद आकार में बनाया है ताकि एक साधारण मानव की तुलना में बुद्ध की आत्मिक महानता को स्पष्ट रूप से दर्शाया जा सके । उदाहरण के लिए, यशोधरा और राहुल का निरूपण तुलनात्मक रूप से बहुत छोटा दिखाई देता है । बुद्ध का सिर सार्थक रूप से यशोधरा की ओर झुका हुआ है जो अनुकम्पा और प्यार का द्योतक है । चेहरे के नाक-नक्शे का अभिलोपन हो गया है लेकिन नेत्र स्पष्ट हैं और चिन्तनशील टकटकी मन का आत्मा में विलय का आभास देती है । महान राजा के सिर के आस-पास और इसके ऊपर एक प्रभामण्डल है : एक विद्याधारी राजा की पृथ्वी और स्वर्ग पर उनकी प्रमुखता के प्रमाणरूप छतरी पकड़ी हुई है ।

चित्रकारी: गुफा 1, बुद्ध का पत्नी और बेटे से मिलन, अजंता गुफा, महाराष्ट्र

द्वार के एक ओर नीचे यशोधरा और राहुल की आकृतियां चित्रित की गई है । राहुल आश्चर्यचकित प्यार से अपने पिता की ओर देख रहा है क्योंकि वह तब मात्र सात दिन का था जब गौतम ने संसार का त्याग किया था । यशोधरा को प्राकृतिक सौन्दर्य के समस्त आकर्षण और वेशभूषा तथा आभूषणों से बाह्य शृंगार के साथ दिखाया गया है । उनका आदर के बजाय प्यार की भावना से अधिक बुद्ध की ओर आकर्षक ढंग से देखना, ध्यान को अधिक आकर्षित करता है । इनके शरीर के अलग-अलग अंगों, मनोहारी मुद्रा का लयबद्ध निरूपण और उनकी कनपटी के ऊपर अलक में तथा इनके कंधों पर फैली हुई लटों में कूंची को दर्शाया गया सर्वोत्तम कार्य; ये सभी एक उच्च स्तर की कला को चित्रित करते हैं एवं इस चित्रकला को नारीजाति की मनोहरता और सौन्दर्य के सर्वश्रेष्ठ चित्रांकनों में से एक बनाते हैं ।

अजन्ता के एक कलाकार की कल्पना के अनुसार एक नारी सुलभ सौन्दर्य के सुन्दर चित्रण की स्पष्टत: माया देवी के रूप में पहचान की गई है जो कि बुद्ध की माता थीं, कलाकार जिनके सौन्दर्य का किसी कहानी के प्रसंग द्वारा प्रतिबंध के बिना ही वर्णन करना चाहता है । राजकुमार को उन सभी शारीरिक आकर्षणों के साथ चित्रित किया गया है जिन्हें चित्रकार ने कुशलतापूर्वक प्रदर्शित किया है । चित्रकार ने राजकुमारी के लिए खड़ी मुद्रा का चयन किया है और प्राकृतिकता तथा मनोहारिता को शामिल करने के लिए उसने उसे एक खम्भे के सहारे से खड़े हुए दिखाया है ताकि उसके छरहरे तथा इकहरे अंगों के सौन्दर्य की भली-भांति सराहना की जा सके । कलाकार ने उसके सिर के झुकाव के माध्यम से पुष्पों से सजे उसके बालों के अंधेरे कुण्डकलों के आकर्षण को बहुत चतुराई से दिखाया है ।

बुद्ध की इन चित्रकलाओं के साथ चित्रकला की अभिरुचि की कुछ ब्राह्मणीय आकृतियां भी हैं ।

इन धार्मिक चित्रकलाओं के अतिरिक्त, इन गुफा मन्दिरों की छतों तथा स्तम्भों पर सजावटी रूप रेखाएं हैं । महाकाव्यों और सतत जातक चित्रकलाओं से भिन्न, यहां पर सम्पूर्ण रूप रेखाएं अपने वर्गों के भीतर हैं । कलाकारों ने विश्व में और उसके आस-पास के विश्व में समस्त वनस्पतियां तथा जीव-जंतुओं को पूरी निष्ठा से चित्रित किया गया है लेकिन हमें रूप एवं वर्ण की कोई भी पुनरावृत्ति कहीं भी देखने के लिए नहीं मिलती है । अजन्ता के कलाकारों ने अपनी बोधगम्यता, मनोभाव और कल्पनाशक्ति को मुक्त कर दिया है, मानो जातक पाठ की उक्ति से उन्हें यहां अकस्मात ही छुटकारा मिल गया हो ।

छत पर सजावट का एक उदाहरण गुफा 17 में मिलता है तथा इसका संबंध लगभग छठीं शताब्दी ईसवी सन् से है । 'लड़ता हुआ हाथी' इसी प्रकार की सजावटी चित्रकला से है तथा इसे विस्तार से देखा जा सकता है । यह असाधारण हाथी जीवित शरीर के उत्तम चित्रण का निरूपण करता है जो गौरवपूर्ण संचलन तथा रेखीय लयबद्धता सहित उस पशु के प्रति नैसर्गिक है और इसे संभवत: कला की एक सर्वोत्तम कृति के रूप में कहा जा सकता है ।

मध्य प्रदेश की बाघ गुफाओं की चित्रकलाएं अजन्ता की गुफा सं. एक और दो की चित्रकलाओं के सदृश हैं । शैलीगत दृष्टि से, दोनों का संबंध समान रूप से है लेकिन बाघ की आकृतियों को अधिक दृढ़तापूर्वक कसौटी के अनुसार तैयार किया गया है तथा खाका भी प्रभावशाली है । ये अजन्ता की तुलना में अधिक सांसारिक और मानवीय हैं । दुर्भाग्यवश अब इनकी स्थिति ऐसी हो गई है कि अब इनकी स्थल पर जा कर ही सराहना की जा सकती है ।

अभी तक ज्ञात प्राचीनतम ब्राह्मणीय चित्रकलाएं अपने खण्डित रूप में बादामी गुफाओं में गुफा सं. तीन में पाई जाती हैं तथा इनका संबंध लगभग छठीं शताब्दी ईसवी सन् से है । तथाकथित शिव और पार्वती कुछ भली-भांति संरक्षित रूप में पाए जाते हैं । हालांकि अजन्ता और बाघ की तकनीक का पालन किया गया है, प्रतिरूपण संरचना तथा अभिव्यक्ति में कहीं अधिक संवेदनशील हैं और खाका कोमल तथा लचीला है ।

अजन्ता, बाघ और बादामी चित्रकलाएं उत्तर तथा दक्षिण की शास्त्रीय परम्परा का उत्तम रूप से प्रतिनिधित्व करती हैं । सित्तान्नवासल और चित्रकलाओं के अन्य केन्द्र दक्षिण में अपनी पैठ की सीमा को दर्शाते हैं । सित्तान्न्वासल की चित्रकलाएं जैन-विषयों और प्रतीक प्रयोग से घनिष्ठ रूप से संबद्ध हैं लेकिन अजन्ता के ही समान मानदण्डों एवं तकनीक का प्रयोग करती हैं । इन चित्रकलाओं की रूपरेखाओं को हल्की लाल पृष्ठभूमि पर गाढ़े रंग से चित्रित किया गया है । बरामदे की छत पर महान सौन्दर्य, पक्षियों सहित कमल के पुष्प तालाब, हाथियों, भैंसों और फूल तोड़ते हुए एक युवक के एक विशाल सजावटी दृश्य को चित्रित किया गया है ।

भित्तिचित्र की आगामी शृंखला ऐलोरा में जीवित रूप में मिलती है, जो कि अत्यधिक महत्त्व क और पवित्रता का एक स्थल है । आठवीं से दसवीं शताब्दी ईसवी सन् के बीच अनेक हिन्दू, बौद्ध और जैन मन्दिरों की खुदाई जीवित शैल से की गई थी । इनमें से सर्वाधिक प्रभावशाली कैलाशनाथ मन्दिर एक स्वतंत्र रूप से खड़ी हुई संरचना है जो कि वास्तव में एकाश्मक है । इस मन्दिर के अलग-अलग भागों की छतों पर और कुछ सहयोजित जैन गुफा मन्दिरों की दीवारों पर चित्रकला के अनेक विखण्डित टुकड़े हैं ।

ऐलोरा की मोटे किनारे वाली चित्रकलाओं की संरचना को आयताकार फलकों द्वारा मापा जाता है । अत: इनकी ऐसी चौखटों की निर्धारित सीमाओं के भीतर कल्पना की गई है जो चित्रकला को धारण करते हैं । अत: अजन्ता की भांति ऐलोरा में विद्यमान नहीं है । जहां तक शैली का संबंध है, ऐलोरा की चित्रकलाएं अजन्ता की चित्रकलाओं के शास्त्रीय मानदण्ड से भिन्न हैं । द्रव्यमान और वृत्ताकार कोमल बहिर्रेखा तथा साथ ही साथ गहराई से बाहर निकलने के भ्रम के प्रतिरूपण की शास्त्रीय परम्परा की निस्संदेह पूर्णरूपेण अवहेलना नहीं की गई है लेकिन ऐलोरा की चित्रकलाओं की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लाक्षणिक विशेषताएं हैं- सिर को असाधारण रूप से मोड़ना, भुजाओं पर चित्रित किए गए कोणीय मोड़, गुप्त अंगों का अवतल मोड़, तीखी, प्रक्षिप्त नाक और बड़े-

बड़े नेत्र जिनसे भारतीय चित्रकला की मध्यकालीन विशेषता को भली-भांति समझा जा सकता है ।

ऐलोरा में गुफा मन्दिर सं. 32 की उड़ती हुई आकृतियों का संबंध नौवीं शताब्दी ईसवी सन् के मध्य से है और ये बादलों के बीच में से निर्बाध संचलन का एक सुन्दर उदाहरण है । शास्त्रीय युग में चेहरे पर अजन्ता प्रतिरूपण की वृत्ताकार सुनम्यता और मध्यकालीन प्रवृत्तियों की भुजाओं के कोणीय मोड़ जैसी दोनों विशेषताओं को यहां भली-भांति चिह्नित किया गया है । यह संभवत: संक्रान्ति काल का एक उत्पाद है ।

दक्षिण भारत में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भित्तिचित्र तंजौर, तमिलनाडु में हैं । तंजौर के राजराजेश्वर मन्दिरों में नृत्य करती हुई आकृतियों का संबंध ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से है तथा ये मध्यकालीन चित्रकलाओं का सुन्दर उदाहरण हैं सभी आकृतियों के पूरी तरह से खुले हुए नेत्र, झुके आधे खुले हुए नेत्रों की अजन्ता परम्परा को स्पष्ट रूप से नकारते हैं । ये आकृतियां अजन्ता की आकृतियों से कम संवेदनशील नहीं हैं और ये संचलन तथा जीवन-शक्ति के स्पन्दन से परिपूर्ण हैं ।

तंजावुर के बृहदीश्वर मन्दिर की नृत्य करती हुई युवती के एक अन्य उदाहरण का संबंध भी इसी अवधि से है और यह निर्बाध संचलन तथा वक्र रूप का एक अद्‌वितीय निरूपण है । आकृति की पीठ और नितम्बों को सजीव तथा यथार्थ रूप में दर्शाया गया है जिसमें बाईं टांग दृढ़तापूर्वक आधार पर टिकी हुई और दाहिनी टांग हवा में है । चेहरे को पार्श्विका में दर्शाया गया है, नाक और ठोढ़ी तीखी हैं, जबकि नेत्र पूरा खुला है । हाथ दूर तक फैले हुए हैं । जैसे कि एक सुस्पष्ट रेखा हवा में झूल रही हो । मन्दिर की एक समार्पित नृत्यांगना की गुंजित रूपरेखाओं सहित विकृत आकृति कला के परिष्करण को वास्तव में साकार रूप देती है और एक आकर्षक, प्रीतिकर तथा मनोहारी पर्व आंखों के लिए प्रस्तुत करती है ।

भारत में भित्तिचित्र की अन्तिम शृंखला हिन्द पुर के निकट लेपाक्षी मन्दिर में पाई जाती हैं तथा इसका संबंध सोलहवीं शताब्दीं से है । इन चित्रकलाओं पर व्यापक रूप से चित्रवल्लरियों के भीतर रहते हुए बल दिया गया है और इसमें शैव तथा धर्मनिरपेक्ष विषयों को चित्रित किया गया है ।

तीन खड़ी हुई महिलाएं अपने सुगठित रूपों तथा रूपरेखाओं सहित एक ऐसा दृश्य प्रस्तुत करती हैं जो इस शैली में कुछ अनम्य बन गया है । आकृतियों को पार्श्विका में कुछ असामान्य रूप में दर्शाया गया है, विशेष रूप से चेहरों के निरूपण को जिसमें द्‌वितीय नेत्र को आकाश में क्षैतिज देखते हुए दिखाया गया है । इन आकृतियों की वर्ण योजना तथा अलंकरण अति मनोहारी है और भारतीय कलाकारों की अति परिष्कृत रुचि को सिद्ध करते हैं ।

इसी मन्दिर का शूकर आखेट भी द्‌वि-आयामी चित्रकला का एक उदाहरण है जो या तो दीवार या ताड़ के पत्ते अथवा कागज पर मध्यकालीन युग के अन्त की चित्रकलाओं की लगभग एक विशेषता बन गया है । इसके पश्चात भारतीय भित्तिचित्रकला में एक गिरावट प्रारम्भ हुई । यह कला अठारहवीं-उन्नीसवीं शताब्दी ईसवी सन् में एक अति सीमित पैमाने पर जारी रही । ग्यारहवीं शताब्दी ईसवी पूर्व की अवधि के आगे से ताड़ के पत्तों और कागज पर लघुचित्रकला के रूप से ज्ञात चित्रकला में अभिव्यक्ति की एक नई पद्‌वति पहले ही प्रारम्भ हो चुकी थी जो संभवत: अधिक सरल तथा मितव्ययी थी ।

केरल में त्रावणकोर के राजकुमार के शासनकाल में, राजस्थान में जयपुर के राजमहलों में और हिमाचल प्रदेश में चम्बा राजमहल के रंगमहल में गिरावट की इस अवधि के कुछ भित्तिचित्र उल्लेखनीय हैं । चम्बा के रंगमहल की चित्रकलाओं पर इस संबंध में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ की ये चित्रकला अपने मूल रूप में राष्ट्रीय संग्रहालय के पास हैं ।

तकनीक-

भारतीय भित्तिचित्रों के निर्माण की तकनीक तथा प्रक्रिया के बारे में चर्चा करना रुचिकर और संभवत: आवश्यक होगा । इस बारे में पांचवीं/छठीं शताब्दी के एक संस्कृत पाठ विष्णुधर्मोत्तरम् के एक विशेष अध्याय में चर्चा की गई है । इन चित्रकलाओं की

प्रक्रिया उन सभी प्रारम्भिक उदाहरणों में समान प्रतीत होती है जो अभी तक जीवित है । इनका एकमात्र अपवाद तंजावुर का राजराजेश्वर मन्दिर है जिसके संबंध में यह माना जाता है कि इसे शैल की सतह पर एक वास्तविक भित्तिचित्र शैली में तैयार किया गया है । अधिकांश वर्ण स्थानीय रूप से उपलब्ध थे । कूंची को बकरी, ऊंट, नेवला आदि पशुओं के बालों से तैयार किया गया था ।

धरती पर चूना पलस्तर की एक अत्यधिक पतली परत से लेप किया गया और उसके ऊपर जलरंगों से चित्रकलाएं चित्रित की गई हैं । वास्तविक भित्तिचित्र पद्धति का अनुसरण करते हुए दीवार की सतह जब गीली होती है तब चित्र बनाए जाते हैं ताकि रंगद्रव्य दीवार की सतह में अन्दर गहराई तक चले जाएं । जबकि भारतीय चित्रकला के अधिकांश मामलों में चित्रकला की जिस अन्य पद्धति का पालन किया गया था उसे सांसारिक या भित्तिचित्र के रूप में जाना जाता है । यह चूने के पलस्तर से की गई सतह पर चित्रकला करने की एक पद्धति है जिसे पहले सूखने दिया जाता है और फिर चूने के ताजे पानी से भिगोया जाता है । इस प्रकार से प्राप्त सतह पर कलाकार अपनी रचना का सृजन करता है । एक अनुभवी हाथ ने इस प्रथम खाके को खींचा था और अन्तिम आरेखण के समय एक सुघड़ श्याम या गहरी भूरी रेखा से कई स्थानों पर बाद में सुधार किए गए थे । कलाकार द्वारा लाल रंग से अपनी प्रथम योजना तैयार करने के पश्चात् वह इस पर एक अर्द्ध-पारदर्शी एकवर्णीय पक्की मिट्टी लगाने के लिए आगे बढ़ता है जिसके माध्यम से रूपरेखा को देखा जा सकता है । इस प्रारम्भिक कांच पर कलाकार ने अपने स्थानीय रंगों से कार्य किया है । मुख्य रूप से गैरिक लाल, चटकीला लाल (सिंदूरी) गैरिक पीला, जम्बुकी नील, लाजवर्द, काजल, चाक सफेद, एकवर्ण और हरे रंग का प्रयोग किया गया था ।